ISSN 2278-8808 SJIF 2014 = 4.889
An International Peer Reviewed & Referred
SCHOLARLY RESEARCH JOURNAL
FOR INTERDISCIPLINARY STUDIES

ललित कलाओं का सौन्दर्य एवं इनमें संगीत का महत्व

Vandana Sharma, Ph. D.
Assistant Professor, Bhagini Nivedita College, Kair Delhi University, Delhi

सार-संक्षेप

संगीत एक कला है। इस लिए संगीत को जानने

के लिए हमें कलाओं को जाना अत्यंत आवश्यक हो जाता है। ऐसा करने से हम संगीत एवं कलाओं के बीच को समझ सकेंगे और संगीत से उत्पन्न होनेवाले सौन्दर्य के बोध के विषय में हमारा ज्ञान और अधिक सार्थक एवं व्यापक हो सकेगा। इस लेख में कलाओं तथा संगीत के बीच के संबंधों की चर्चा की गई है।

कला के विषय में लगभग सभी संस्कृतियों तथा सभ्यताओं में बहुत सोच-विचार किया गया है। ग्रीक सभ्यता में सुकरात तथा प्लेटों ने दार्शनिक रूप से कला का अध्ययण किया था। कालांतर में इसी अध्ययण को आधारभूमि माँ कर सौंदर्यशास्त्र की संकल्पना को बल मिला तथा सौंदर्यशास्त्र के सिद्धांतों को निर्धारित तथा स्थापित किया गया। लेकिन भारत में कलाओं पर वात्स्यायन ने कामसूत्र नामक ग्रंथ में विस्तृत चर्चा की है। यह ग्रंथ भारतीय सौंदर्यशास्त्र के सिद्धांतों के प्रतिपादन के लिए बहुत महत्वपूर्ण ग्रंथ मन जाता है। इसलिए हमें कलाओं को बहाली भांति समझ लेना चाहिए। किन्तु यह भी सत्य है की कला की अवधारणा को समझना सरल नहीं होता। कलाओं के सिद्धांत इतने अधिक सूक्ष्म होते हैं की थोड़ी सी असावधानी भी भ्रांतियाँ उत्पन्न कर सक्ति है। इसलिए नीचे के अनुच्छेदों में कला की विस्तृत चर्चा की जा रही है

कला एक अत्यंत व्यापक शब्द है। वास्तव में कलाओं की अवधारणा को समझना सरल नहीं है। ललित कलाओं पर विचार करने से पूर्व हमें यह जान लेना चाहिए की कलाएं हैं क्या।

कला क्या है?

""कला" जिसे आंग्ल भाषा में "आर्ट" के नाम से भी जाना जाता है, उसका अर्थ समझने के लिए उसके शाब्दिक अर्थ को देखते हैं। कला का अर्थ अभी तक निश्चित नहीं हो पाया है। यद्यपि इसकी हजारों परिभाषाएँ की गयी हैं। भारतीय परम्परा के अनुसार कला उन सारी क्रियाओं

को कहते हैं जिनमें कौशल अपेक्षित हो। यूरोपीय शास्त्रियों ने भी कला में कौशल को महत्त्वपूर्ण माना है। कला एक प्रकार का कृत्रिम निर्माण है जिसमे शारीरिक और मानसिक कौशलों का प्रयोग होता है।

सीधे शब्दों में कहें तो, आम तौर पर मानव द्वारा उसकी खोपड़ी में चल रही हजारो प्रकार की कल्पनाओ को अन्य सभी भाई बन्धुवों के सामने दिखाने की क्रिया को ही "कला" कहा जाता है।[1]

कला की व्युत्पत्ति संस्कृत भाषा के 'कल्' धातु से हुई है। इसका अर्थ होता है, चमकना, सुशोभित होना, दिव्यता इत्यादि। इस प्रकार, कला में शोभा अथवा सुंदरता के गुण निहित होते हैं। कला की परिभाषा करते हुए डा। नगेंद्र ने कहा है,

"किसी भी कार्य को व्यवस्था पूर्वक एवं सुंदर ढंग से करना कला है।"

उदाहरण के लिए, यदि आप की लिखाई दूसरों को सुंदर लगती है तो यह लेखन की कला अथवा सुलेख है। यदि आप अपनी वाणी से दूसरों को आकर्षित करते हैं तथा आपकी वाणी में कोमलता और लालित्य है तो आब वक्तित्व की कला में पारंगत हैं। यदि आप सरस एवं स्वादिष्ट व्यंजन बना लेते हैं तो आप पाक कला के मर्मज्ञ हैं। इस प्रकार, अन्य उदाहरण भी दिये जा सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि किसी कार्य में केवल दक्षता ही आवश्यक नहीं है। उस कार्य में यदि सुंदरता भी निहित है तो वह कार्य कला की श्रेणी में आयेगा।

कलाओं में दो तत्वों की अनिवार्यता बतायी गयी है। एक कार्य की उपयोगिता तथा दूसरी उसमें निहित सुंदरता।

इस आधार पर कलायें दो प्रकार की हो सकती हैं:

१। ललित कलायें और दूसरी उपयोगी कलायें।

[1] bhuneshwarkaushik, सितम्बर 22, 2017.
https://artinfohindi.wordpress.com/2017/09/22/%E0%A4%95%E0%A4%B2%E0%A4%BE-%E0%A4%95%E0%A5%8D%E0%A4%AF%E0%A4%BE-%E0%A4%B9%E0%A5%88-%E0%A4%95%E0%A4%B2%E0%A4%BE-%E0%A4%95%E0%A4%BE-%E0%A4%AE%E0%A4%B9%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B5/

ललित कलाओं में सौंदर्य की प्रधानता होती है। उपयोग पर विशेष ध्यान नहीं रहता। उदाहरण के लिए ताजमहल वास्तु-शिल्प का एक उत्कृष्ट नमूना है। लेकिन इसकी सुंदरता का कोई उपयोग नहीं है। इस कला को देखकर केवल नयनों की तृप्ति होती है, और कुछ नहीं। इसके विपरीत, एक कुर्सी, जिसपर कलात्मक नक्काशी की गयी है, वह स्थापत्य कला का उदाहरण होते हुए भी उपयोगी कलाओं की श्रेणी में आयेगी, क्योंकि वह अद्‌भुत नक्काशी के कारण सुंदर दीखती है और साथ-साथ वह बैठने के भी काम आती है।

ललित कलायें पाँच प्रकार की बतायी गयी हैं:

१। संगीत कला, (Music)

२। साहित्य कला, (Literature)

३। चित्र कला (Painting)

४। मूर्ति कला अथवा स्थापत्य कला, (Sculpture)

५। वास्तुशिल्प अथवा भवन-निर्माण कला। (Architecture)

इन पाँच ललित कलाओं में से प्रथम दो - संगीत तथा साहित्य - विशुद्‌ध रूप से सौंदर्य पर आधारित ललित कलायें हैं। इनका उपयोग की दृष्टि से कोई अर्थ नहीं है। अतः ये विशुद्‌ध ललित कलायें कहलाती हैं। इसकेविपरीत, चित्र कला, स्थापत्य कला तथा वास्तु-शिल्प इत्यादि उपयोग की दृष्टि से भी जानी जाती हैं। उदाहरण के लिए, वास्तु-शिल्प की दृष्टि से तैयार किया गया भवन सुंदर तो होगा ही, उसमें रहा भी जा सकता है। भवन हमें मौसम की प्रतिकूलता से बचाता है। धूप, ठंड, बरसात इत्यादि से भवन हमारी रक्षा करता है। इस प्रकार वह उपयोगी कला का भी उदाहरण है। इसी प्रकार, कोई पुस्तक जो हमें ज्ञान प्रदान करती है, उसे चित्रों के द्‌वारा सजाया जा सकता है। उसपर सुंदर कवर चढाया जा सकता है। इस प्रकार उसे उपयोगी भी बनाया जा सकता है तथा आकर्षक भी। नक्काशी वाली कुर्सी का उदाहरण तो ऊपर दिया जा चुका है। इस प्रकार चित्रकला, स्थापत्य कला तथा वास्तु कला उपयोगी ललित कलाओं की श्रेणी में आती हैं।

कलाओं का एक और वर्गीकरण भी प्रसिद्‌ध है। इस के अनुसार, कलाओं के दो वर्ग होते हैं:

१। समय सापेक्ष कलायें,

२। समय निर्पेक्ष कलायें।

समय सापेक्ष कलायें वे कलायें होती हैं, जिनके प्रदर्शन में कुछ समय लगता है। ये कलायें समय पर आधारित होती हैं। जैसे, गीत गाने में अथवा कविता पढ़ने में कुछ समय लगता है। ऐसा नहीं हो सकता कि पूरा गीत अथवा पूरी कविता बिना समय बिताये सुना दी जाये। एक शब्द बोलने में भी कुछ न कुछ समय तो लगेगा ही। साहित्य, संगीत, नाटक, फ़िल्म, आदि समय-सापेक्ष कलायें कहलाती हैं।

इसके विपरीत, चित्र पूरा होने में जो समय लगता है, उसके बाद, जब उसे रसिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है, तब उस चित्र को देखने में कुछ समय नहीं लगता। उसे ऊपर से, नीचे से, - कहीं से भी देखा जा सकता है। कविता अथवा गीत को क्रमबद्ध रूप से सुनना होगा। ऐसा नहीं हो सकता कि गीत की अंतिम पंक्ति को पहले सुन लिया जाये। जब कि चित्रकला में यह समस्या नहीं होती। चित्र को आप कहीं से भी देख सकते हैं।

यदि आप कला को विशेष समय देते हैं और इसके सांथ नियमित रूप से कुछ वक्त बिताते हैं तो निश्चित ही आपकी कला आपको बहुत ऊपर तक लेकर जाएगी। कला में आपको शीर्ष स्थान तक पहुँचाने का विशेष सामर्थ्य होता है। बस देर है तो इसे पहचानने की।

कलाओं को समझ लेने के पश्चात अब हम सौन्दर्य के विभिन्न पक्षों पर विकनार करेंगे।

सौंदर्य क्या है?

सौंदर्य शब्द 'सुंदर' से बना है। 'सुंदर' एक विशेषण है, जिसकी भाववाचक संज्ञा सौंदर्य है। उदाहरन के लिए, यह गीत बहुत सुंदर है। इस गीत में अत्यधिक सौंदर्य निहित है।

सुंदर शब्द से ही सुंदरता बनता है। सुंदरता का ही अधिक प्रांजल तथा कुछ क्लिष्ट पर्याय सौंदर्य है। सौंदर्य का अंग्रेजी पर्याय ब्यूटी है। सौंदर्य की अनुभूति संवेगों द्वारा होती है। चित्त में उद्भूत ये संवेग ऐंद्रिय संवेदनाओं पर आधारित होते हैं। हमारे शरीर के विभिन्न अंग मस्तिष्क तक सूचनायें पहुँचाते हैं। इन्हीं सूचनाओं के आधार पर संवेगों का सृजन होता है। उदाहरण के लिए, जब हम कोई दुखद दृश्य देखते हैं तो हमारे मन में करुणा का संचार होता है। जब हम कोई मधुर ध्वनि सुनते हैं, तो हमारे मन में आनंद का सृजन होता है, इत्यादि।

जिस विद्या के अंतर्गत सौंदर्य का अध्ययन किया जाता है उसे सौंदर्य-शास्त्र कहा जाता है। इसका अंग्रेजी पर्याय है - एस्थेटिक्स। सौंदर्यशास्त्र के अंतरगत सौंदर्य तथा इससे संबंधित सभी अवधारणाओं का अध्ययन किया जाता है।[2]

ललित कलाओं तथा सौन्दर्य की अवधारणा को भली भांति जान लेने के उपरांत अब हम इस बात पर विचार करेंगे की संगीत क्या है।

संगीत क्या है?

सामान्यतः ऐसा कहा जाता है की 'सम्यक गीतम' सङ्गीतम। इस प्रकार जब किसी गीत को भली भांति गाया जाता है तब वह संगीत बन जाता है। लेकिन शास्त्रों के अध्ययण से पता चलता है की संगीत में तीन कलाएं सन्निहित होती हैं - गीत, वाद्य और नृत्य। इन तीनों कलाओं का समन्वय ही संगीत है। इसलिए हम कह सकते हैं की संगीत तीन कलाओं का समायोजन है। ये तीनों ललित कलाएं ही हैं। ललित कलाओं में सौन्दर्य स्वतः ही सन्निहित रहता है। इसलिए संगीत का वास्तविक गुण सौन्दर्य ही है।[3]

इस लिए अब प्रश्न उठता है की सौन्दर्य क्या है? इस प्रश्न का उत्तर दार्शनिकों ने तो दिया ही है, कलाकारों, साहित्यकारों, और समाज के विभिन्न वर्गों ने भी इसकी खूब चर्चा की है। प्राचीन भारतीय दर्शन में 'सत्यं ,शिवं सुंदरम' की अवधारणा सौन्दर्य के आध्यात्मिक रूप को ही परिलक्षित करती है। पाश्चात्य दार्शनिकों ने सौन्दर्य को 'ऐन्द्रिय समवेदनाओं से उत्पन्न अनुभूति' की सांगया दी है। हईगल ने सौन्दर्य एवं कला के संबंद को समझाते हुए कहा है की,

"कलाएं प्रकृति में व्याप्त सौंदर्य की ही अभिव्यक्ति हैं।" ये प्रकृति में आनन्द का सृजन करती हैं। वास्तवमें ललित कलाओं का मूल उद्देश्य ही यह है की वे मानव को प्रकृति से जोड़ने का काम करती हैं। ललित कलाओं में वह शक्ति होती है की उनसे मानव अपने भीतर के प्रकृति प्रेम का अभिव्यक्ति करते हुए आनन्द की अनुभूति करता है और अंततोगत्वा उसी आनन्द से आत्म-चिन्तन का समारंभ होता है। यही आत्म-चिन्तन 'सत्यं शिवं सुंदरम' की संकल्पना को परिपुष्टि प्रदान करता है।

---

[2] https://www.britannica.com/topic/aesthetics
[3] संगीत रत्नाकर: स्वरागताध्यय, पिंडोटपट्टी प्रकरण.

एक अन्य पाश्चात्य विद्वान के अनुसार, "कलाएं मानव के द्वारा प्राकृतिक सौंदर्य का अनुवाद प्रस्तुत करती हैं। यह अनुवाद जितना आकर्षक होगा उतनी ही उच्च कोटी की कला मानी जाएगी।"

यह बात सत्य ही प्रतीत होती है। वास्तव में संगीत के सभी स्वर प्रकृति से ही लिए गए हैं। विभिन्न पशु-पक्षियों की आवाज से विभिन्न सांगीतिक स्वरों की कल्पना की गई है, ऐसी मान्यता का समर्थन अनेक विद्वानों के द्वारा किया जाता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं की सौन्दर्य ललित कलाओं का एक अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस स्थापना को सुनिश्चित कर लेने के उपरांत अब हम इस बात पर विचार करेंगे की संगीत में सौन्दर्य का क्या स्थान है।

सौंदर्य की अनुभूति:

सौंदर्य क्योंकि भाववाचक संज्ञा है, इसलिए यह अनुभूति का विषय है। अनुभूति के लिए हमारे पास पाँच इंद्रियां विद्यमान हैं:

१। स्पर्श, जो त्वचा का गुण है,

२। स्वाद, जो जिव्हा का गुण है,

३। गंध , जो नासिका का गुण है,

४। श्रवण, जो कानों का गुण है और

५। दर्शन, जो दृष्टि का गुण है।

सौंदर्य की अनुभूति इन्हीं पाँच इंद्रियों से संभव होती है। लेकिन पाँचों इंद्रियां संगीत में सौंदर्य के अनुभव के लिए प्रयुक्त नहीं होतीं। केवल श्रवण तथा दर्शन ही संगीत के लिए पर्याप्त है।

इनमें भी, नाद की अनुभूति श्रवण के माध्यम से ही होती है। केवल नृत्य में निदर्शन की आवश्यक्ता होती है। अअधिकतर हम श्रवण के माध्यम से ही संगीत का आनंद लेते हैं। लोक संगीत में, जिसमें नृत्य भी सम्मिलित होता है, अथवा पापुलर म्यूज़िक में जो किस्म-किस्म की

पोशाकों तथा भंगिमाओं से भरपूर होता है, हमें श्रवण के साथ-साथ दर्शन की भी आवश्यकता होती है।

दर्शन का सौंदर्य तो सर्व विदित ही है। इसलिए हम इस प्रकरण में उसकी चर्चा बहुत कम ही करेंगे। मूलतः हम नाद के सौंदर्य पर अपना ध्यान केंद्रित करेंगे। दर्शन का सौंदर्य संगीत मे केवल निम्न उद्देश्यों की पूर्ति करता है:

१। गायन-वादन के समय हम कलाकार की भाव-भंगिमा को भी निहारते हैं। यद्यपि इसके अनुपलब्ध होने पर भी विशेष अंतर नहीं आता। उदाहरण के लिए आकाशवाणी पर भी संगीत के प्रसारण को हम उतने ही चाव से सुनते हैं जितना कि दूरदर्शन पर।

२। नृत्य में दर्शन आवश्यक हो जाता है। बिना देखे नृत्य का आनंद लेना असंभव है। इसलिए, नृत्य की वीडियो रिकार्डिंग ही आनंद देती है। रेडिओ पर नृत्य की कल्पना निरर्थक ही होगी।

३, लोकप्रिय संगीत (pop music) में संगीत तथा नृत्य, दोनों का मिश्रण होता है। इसलिए, इसका आनंद दर्शन तथा श्रवण दोनों से होता है। लेकिन इसका आनंद रेडिओ पर भी उठाया जा सकता है।

संगीत का आधार नाद है। संगीत में अभिव्यक्ति का माध्यम भी नाद ही है। नाद को हमारे मनीषियों ने ब्रह्म की सांगया दी है तथा संपूर्ण ब्रह्मांड को ही नादात्मक बताया है।

"न नादेन विना गीतम्,

न नादेन विना वाद्यम्,

न नादेन विना नृत्यम्, तसमान्नादात्मको जगत्।"

अर्थात्, नाद के बिना न गीत संभव है, न वाद्य संभव है और न ही नृत्य संभव है। इसलिए संपूर्ण जगत् ही नादमय है।

नाद[4] की अभिव्यक्ति संगीत के माध्यम से होती है। संगीत के मूलतः तीन प्रकार भारत में प्रचलित हैं:

१। शास्त्रीय संगीत अथवा क्लासिकल म्युज़िक,

[4] संगीत रत्नाकर: प्रथम अध्याय, पिंडोटपट्टी प्रकरण.

२। उपशास्त्रीय संगीत अथवा सेमिक्लासिकल म्यूज़िक,

३। सुगम संगीत अथवा लाइट म्यूज़िक।

कलायें हमें भक्ति की ओर ले जाती हैं। पं। अहोबल ने संगीत पारिजात नामक ग्रंथ में स्पष्ट किया है कि संगीत कला के दो उद्देश्य होते हैं। प्रथम, जनरंजन तथा दूसरा, भव-भंजन। भवभंजन भक्ति और मोक्ष से संबंधित होता है। संभवतः इसीलिए भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को अपना विराट रूप दिखा कर श्रीमत् भगवद्गीता में कहा था,

"वेदानाम् सामवेदोऽस्मि।"[5] अर्थात् वेदों में मैं ही सामवेद हूं।

अथवा महाभारत के शांति-पर्व में नारद से भगवान श्रीकृष्ण ने कहा था,

"मद्भक्ताः यत्र गायंति, तत्र तिष्ठामि नारद।"

ये प्रसंग स्पष्ट रूप से कलाओं के अध्यात्मिक स्वरूप को प्रतिष्ठापित करते हैं। कलाओं से हम मोक्ष की प्राप्ति कर सकते हैं। वास्तव में कलायें हमें सांसारिक बंधनों से ऊपर उठा देती हैं। यही कारण है कि कलाकारों के लिए भौगोलिक सीमायें कोई अर्थ नहीं रखतीं। कलाकार संपूर्ण जगत को समान रूप से प्रेम करते हैं। कलाकारों के लिए सब अपने ही होते हैं।

"कहकशाँ है मेरी सिमरन,

शाम की सुर्खी मेरा कुंदन,

नूर का कड़का मेरी चिलमन,

तोड़ चुका हूं सारे बंधन,

बोल इकतारे झनझनझनझन।[6]

यही कारण है की संगीत का चरम लक्ष्य "भव -भंजन" है।

---

[5] श्रीमद्भागवात गीत: 9:11-25.

[6] एच। एम। वेए। के द्वारा निकाली गई जगजीत सिंह की एल्बम 'कहकशान' से यह गीत लिया गया है।

नाद की साधना से साधक को जिस मानसिक सौन्दर्य की अनुभूति होती है, वह सभी बाह्य दुखों से मुक्ति दिलाने वाला होता है। नाद की आराधना से अभिभूत होकर मनुष्य दुख और तनावों से मुक्त हो जाता है। यही कारण है की आजकल मानसिक तनावों से मुक्ति के लिए मनोवैज्ञानिक भी संगीत कला के आस्वादन की सलाह देते देखे जाते हैं।

संगीत का सेवन एवं आस्वादन दोनों ही मनुष्य को अपने भीतर झाँकने का अवसर देते हैं। केवल मनुष्य ही नहीं पशु पक्षी भी संगीत के जादू से सम्मोहित हो जाते हैं। ऐसा है संगीत में व्याप्त सौन्दर्य का चमत्कार। संगीत मानसिक तनावों को कम करने में बहुत सहायक सिद्ध हो रहा है। यही कारण है कि योग करते समय अनेक योग केंद्रों में शास्त्रीय संगीत विशेषतः वाद्य संगीत बजता रहता है। संगीत से चित्त की एकाग्रता में भी सहायता मिलती है। जब हम संगीत के स्वरों पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं, उस समय चित्त वृत्तियों का निरोध स्वयम् ही हो जाता है। संगीत का आस्वादन करते हुए अथवा संगीत की साधना करते हुए हम काम, क्रोध आदि चित्त वृत्तियों से ऊपर उठ कर एक अनुपम आनंद-सागर में डूबने लगते हैं। आनंद का यह सागर हमें लौकिक कष्टों से परे एक नवीन संसार में ले जाता है। इस नवीन संसार में दुःख एवं क्लेश, तनाव एवं पीडा, काम अथवा क्रोध इत्यादि का कोई स्थान नहीं होता। यहां तो केवल प्रेम और आनंद की तरंगें निरंतर प्रस्फुटित होती रहती हैं। गीत वाद्य एवं नृत्य, संगीत की किसी भी विधा का उपासक तनाव एवं तकलीफों से दूर ही रहता है। इस प्रकार, हम देखते हैं की ललित कलाएं, विशेषकर संगीत कला सौन्दर्य के निष्पादन की दृष्टि से बहुत ही आनंददायक एवं रुचिकर माध्यम है